ISSN No-2231-5063 Vol.1,Issue.II/Agust 11pp.1-4

Research Paper

'' भूमंडलीकरण के दौर में डॉ. देवेष ठाकुर कृत 'जगनाथा' : एक विषेश संदर्भ में''

प्रा. डॉ. रामचंद्र मारुती लोंढे
क्रांतिसिंह नाना पाटील महाविदयालय वाळवा
ता.वाळवा जि. सांगली, (महाराश्ट्र)
पिन कोड नं. 415 409

आज विश्व में भूमंडलीकरण को लेकर काफी चर्चा हो रही है। पूरे विश्व को एक ग्राम के रुप में देखने की दृश्टी एवं वस्तुओ, सेवाओ. तथा पूँजी के मुक्त आवागमन की व्यवस्था को ग्लोबोलाइजेशन का नाम दिया गया है, जिसे 'ग्लोबलीकरण', 'वैश्वीकरण', 'जगतीकरण' जैसे अनेक शब्दों के रुप में पहचाना जा रहा है। यह तथ्य संदेह से परे है कि इस व्यवस्था के लागू होने से पूरा विश्व प्रभावित हो रहा है तथा राश्ट्रों, राज्यों और सरकारों से होता हुआ यह प्रभाव व्यक्ति के निजी जीवन के विविध पक्षों को भी छूने लगा है। यह भी सूनिश्चित है कि वैश्वीकरण की व्यवस्था लागू करने में व्यक्तियों की, जनता की और सभी सरकारों की भी सर्व सम्मति नहीं रही लेकिन मीडिया के माध्यम से हो रहे वैश्वीकरण के लाभ और हानि की चर्चा जरुर हो रही है। लेकिन इसका वास्तविक रुप क्या है?यह व्यवस्था किस वर्ग के हित साधन की बात कर रही है, यह जानना भी आवश्यक है। वैश्वीकरण का अर्थ है, 'वसुधैव कुटुम्बकम' भूमंडलीकरण विश्व को जोडना नहीं चाहता बल्कि विश्व का बाजार जोडना चाहता है जिसका मुख्य उद्देश्य है मुनाफा।

भूमंडलीकरण के इस दौर में अमेरिका, जापान, चीन, ब्रिटेन, फ्रान्स आदि देश मुख्य प्रवाह से जुडे है जिसमें अमेरिका सबसे शक्तिशाली होने के कारण इस बाजार पर अपना नियंत्रण रखने की होड मे है।

हिंदी के प्रगतिशील यथार्थ लेखन करने वाले उपन्यासकर डॉ. देवेश ठाकूर जी ने अनेक विधाओं पर अपनी कलम चलाई है। डॉ. देवश जी ने हिंदी उपन्यास को आज तक अनेक महत्वपूर्ण उपन्यास लिखकर अपनी विशिश्ट प्रतिभा का एहसास करा दिया है। 'जनगाथ', 'अपना–अपना आकाश', 'भ्रममभंग', 'प्रिय शबनम', इसीलिए 'गुरुकुल' ' शिखर पुरुश' जैसी उनकी प्रमुख उपन्यास कृतियॉ रही है।

प्रस्तुत उपन्यास का फलक महानगरीय परिवेश रहा है। सन् 1986 में प्रकाशित 'जनगाथा' को ठाकुर जी का महत्वाकांक्षी प्रयास कहा जाये तो गलत नहीं होगा। प्रस्तुत उपन्यास में शकुन की कथा के साथ कई अन्य प्रासंगिक कथाऍ और घटनाऍ जुडी है। एक कथा जोशी की दूसरी कथा शंकर भैया की है। और साथ ही शकुन की जिन्दगी में आयी कई सहेलियों की कथाऍ है। इन सब में जोशी की कथा को उसकी कथा न कहकर उसे 'जनगाथा' उपन्यास का एक अत्यंत विस्फोटक पात्र कहना अधिक उचित होगा। उपन्यास का शिल्प परंपरागत विधागत सीमाओं को तोडकर नयी राह पर चलता है। जो पाठक 'जनगाथा' को परंपरागत उपन्यास मानकर पढेंगे उन्हें अवश्य ही निराशा होगी। जनगाथा उपन्यास का प्रमुख औपन्यासिक तत्व तो यहॉ शकून के बचपन से लेकर उसके अंतिम क्षण तक की जीवन यात्रा के रुप में जिसे एक सुक्ष्म कथा– तंतु कह सकते है। जनगाथा में शिवनाथ, शकुन और जोशी के बीच देशकाल, परिवेश और वर्तमान व्यवस्था संबंधी विचार तो उपन्यास के अधिकांश को घेरते है। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि इस उपन्यास की कथावस्तु की कोई निश्चित रुपरेखा नहीं जिसकी पाठक – अपेक्षा करता है। न ही इसमें कोई नायक है, न नायिका वैसे इसके प्रमुख पात्र है – शकून, शिवनाथ और पत्रकार जोशी लेकिन इन तीन पात्रों से कथावस्तु नहीं बनती। सबका अस्तित्व अलग – अलग है।

महानगरों की जनसंख्या बेहिसाब बढती जा रही है। यहॉ एक समुद्र पानी का है तो दूसरा लोगों का। अनेक छोटे – बडे गॉवों से रोजी – रोटी कमाने की दृश्टी से महानगरों की ओर आकर्शित हो रहे है। महानगरों में अर्थाभाव की समंस्या का सामना करने वाले महत्वपूर्ण चरित्र पत्रकार जोशी एवं लेखक शिवनाथ का चित्रण सफलता से किया है। महानगरों में पैसा भगवान बनता जा रहा है, जिसके पास पैसा है उसकी पूजा हो रही है। इस प्रकार भूखंडलीकरण के दौर मे आज सारे रिश्ते – नाते अर्थ केंद्रित बने है।

आधूनिक साहित्यकार समकालीन साहित्य लिखने के अलावा रॉयल्टी के लिए लिख रहे है। यह प्रस्तुत उध्दरण से स्पष्ट होता है, ''अन्यथा यही कि तुम उन पर एक मोटी सी किताब लिखोगे, किताब छपेगी और तुम्हें रॉयल्टी मिलेगी। रॉयल्टी से तुम अपने लिए, सिर्फ अपने लिए कुछ सुविधाऍ और जोड. लेंगें। कुछ कपडे., कुछ क्रॉकरी और कुछ बैड्शीट्स और अगर कुछ ज्यादा मिल गया तो युनिट ट्रस्ट के कुल युनिट खरीद लेगे बस मैं जानता हूँ कि तुम लोगों की सारी क्रांतिधर्मिता यहीं तक आकर चूक जाती है।''1 वर्तमान युगीन साहित्यकार की लेखनी रुपयों के आगे दिशाहीन होकर भौंडा साहित्य निर्माण कर रही है।

लेखक ने अपने पात्रों को उसी रुप में प्रस्तुत किया जिस रुप में उन्हें यथार्थ जीवन मिला है। यथार्थ अनुभव की त्रासदी ने ही उसे कथ्य की स्पश्टता दी है, जिसके बिना व्यवस्था का इंद्रजाल टूटता नहीं दिखता। यद्यपि कहने के लिए शासन–व्यवस्था जनतांत्रिक कही जाती है फिर भी यहॉ जनतंत्र या प्रजातंत्र नहीं परिवार तंत्र चलाया जा रहा है। मुट्ठी भर स्वार्थी, घटिया लोग देश को चला रहे हैं। राजनीति पर टिप्पणी करते हुए लेखक कहते है, ''आज की राजनीति वोटों की राजनीति है।''2 लेखक का कहना है कि आज अवसरवादी, स्वार्थी, घटिया, अर्धशिक्षित और अशिक्षितों ने सत्ता की बागडोर थाम ली है। उसका उपयोग जनता के लिए नहीं बल्कि अपने लिए कर रहे है। दूसरी ओर अपनी काली करतूतों सें राहत पाने के लिए साधुओं, तांत्रिकों तथा योगियों की शरण भी जाते रहते है। आज की राजनीति में गुटबंदी तो हर क्षेत्र का धर्म सा बन गयी है। पूँजीपति, पुलिस, प्रशासन और राजनीति जो दलाल संस्कृति को पैदा करते हैं। इस नयी अराजकता से गरीबी हटाओं के नारे 'गरीबी बढ़ाओं, अपना पेट फुलाओं' की नीति को सार्थक कर रही है। आज महाजन के स्थान पर पूँजीपतियों का अत्याचार फैल गया है। जो पहले से भी अधिक क्रूर और भयावह है। शिवनाथ अखबार में खबरे पढता है, ''रुटीन खबरें।लोगोवाल की धमकी। गुजरात में बाढ़ की विनाशलीला। बाप व्दारा अपनी बेटी के साथ पहले बलात्कार और फिर उसकी बिक्री। देश की सीमाओं पर बाहरी आक्रमण का खतरा। पत्रकार की पिटाई। पुलिस मुटभेड़ में तीन डाकुओं का सफाया। सब इन्स्पेक्टर व्दारा हरिजन लड़की के साथ बलात्कार, उत्तर प्रदेश में एक दहेज हत्या, दिन–दहाड़े किसी का कत्ल हो जाता है, किसी के यहॉ डाका पडता है और किसी औरत के साथ बलात्कार कर लिया जाता है। फिर भी किसी के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती।''3

इस पूरे संदर्भ और प्रसंग को भूमंडलीकरण के बढ़ते हुए खतरे के रुप में देखा और विश्लेशित किया जाना चाहिए। आज बुध्दिजीवी भी समय की धारा के साथ बहते जा रहे है। स्कूल,

कॉलेज और विश्वविद्यालयों में जहॉ देश कें भावी सूत्रधार का व्यक्तित्व रुपायित होता है, वहॉ भी स्वार्थ और अवसरवादिता अपनी कुरता दिखा रही है। प्रस्तुत उपन्यास का पात्र शिवनाथ के घर उनका एक अध्यापक मित्र खुशखबरी सुनाने आता है, ''इस बार हायर सेकंडरी में केंमिस्ट्री का एग्जामिनर बन गया हूँ।

ओह.....,

बधाई। अब तो गर्मियों भर व्यस्त रहेंगे। वह तो ठीक है। लेकिन सिर्फ कापियॉ जॉच कर क्या मिलेगा। आपका जानने वाला कोई परीक्षा में बैठा रहा हो तो उसे बतला दीजिए। क्या?यही, कि इस बार मैं परीक्षक हूँ?

उससे क्या होगा?अरे भाई, वह दौंडा हुआ मेरे पास आयेगा मेडिकल और इंजीनियरिंग में कितना टफ कम्पटीशन है। मेडिकल की सीट के लिए दो–ढाई लाख देने पढ़ते है। इंजीनियर की सीट भी पचास–पचहत्तर हजार से कम नहीं मिलती। ''मेरा रेट तो सिर्फ पॉच हजार है।''4 उपर्युक्त उदाहरण से यह स्पश्ट होता है कि जल्द से जल्द बड़ा बनना और भौतिक सुविधाऍ खरीदना इसमें अध्यापक भी पीछे नहीं रहे है। शिक्षा क्षेत्र में भी योग्यता और मनीशा का कोई अर्थ नहीं रहा क्योंकि संपर्कवाद, जातियता, अनुशासनहीनता, पक्षपात और अधिकारी वर्ग का नैतिक अधःपतन हो गया है। डिग्री, प्रमोशन और नियुक्तियों पर भी ये प्रवृत्तीयॉ हावी हो गयी है। इस भ्रश्ट राजनीति में पत्रकारिता भी नहीं बच पायी है। यहॉ भी सच का झूठ और झूठ का सच हो रहा है। जोशी एक बार अपने साप्ताहिक संपादन के निर्देश पर एक विपक्षी महिला सांसद के कारनामों के तथ्य इक्ट्ठे रिपोर्ट की पहली किस्त छपवाता है, जिससे देशभर में तहलका मच जाता है। लेकिन जल्दी ही पॉसा पलटता है, उसी महिला सांसद से संपादक पैसा लेता है और मुक्त भाव से अपने संगठित कदम बढ़ाने का साहस उनमें संचारित हो। क्रांति व्यक्ति से नहीं जनता से होती है, और जनता तभी सजग हो पाएगी जब जोशी की तरह उनके भी सारे भ्रम भंग हो जायेंगे।

यह सब भूमंडलीकरण के परोक्ष और अपरोक्ष दबाव और खतरों को ही लक्षित करते है। इस समस्या के जाल में फॅसी हुई नारियॉ इस जाल से निकलने की कोशिश तो जरुर करती है, कुछ निकलती भी है, लेकिन ज्यादातर इसमें घूट–घूट कर अपने प्राण छोड़ देती है। सलमा, सरीता शकुन और मानुशी वे अभागिनें है जिनका न तो तकदीर ने साथ दिया और न ही उनके कोशिशों ने। एक जुआ और सही सोच कर जीवन का जुआ खेलने वालों में मिसेज पुरी ही एक मात्र सफल रही है। सरिता की त्रासदी के लिए बुजुर्गो का अविवेक उत्तरदायी है। सलमा हार गयी है क्योंकि उसे सही दिशा नहीं मिली। सलमा, सरीता और शकुन की त्रासदी के लिए जातीय भेदभाव जिम्मेदार है तो निरपराध मानुशी की हत्या के लिए राजनीतिक व्यवस्था जिम्मेदार है। स्त्री केवल वासना तृप्ति का साधन समझी जाती है। प्रस्तुत उपन्यास की पात्र शकुन कहती है, ''पति के लिए और पति के परिवार वालों के लिए वह एक जिन्स होती है।''5 पुरुश को इसकी स्वतंत्रता खटकती है। स्त्री जीवन के एक और विशेशता पर प्रकाश डाला है।

एक तरफ भूमंडलीकरण की तथाकथित चकाचौंध, जगर–मगर और दूसरी ओर इस भूमंडलीकरण के फलस्वरुप मनुश्य की मुश्किलें, संघर्श भी कुछ कम नहीं है। भूमंडलीकरण ने मनुश्य की यातना को कम नहीं किया बल्कि उसे एक तरह से बढ़ाया ही है। लेकिन फिर भी कोशिश यह की 'दिये तले का यह अंधेरा कहीं हमें न देखे।'

'जनगाथा' उपन्यास में एक प्रसंग इस प्रकार चित्रित हुआ है सुदेश की पत्नी का अंत होकर कुछ दिन बीते थे कि उसकी भाभी शिवनाथ से पुनर्विवाह के बारे में कुरेदती है। इस प्रकार लेखक ने उत्तर आधुनिकता की त्रासदी के कई आयामों को प्रमाणित तथा तटस्थ दृश्टिकोण से ऑका है। शेश प्रसंगो में सुदेश की पत्नी की अप्रत्याशित मृत्यु एक है दूसरी शकुन के मॉ का देहांत। इन प्रसंगों में सहानुभूति जतलाने के लिए आए हुए लोगों की मानसिकता को चित्रित किया है। जो थोडी देर तक ऑसू बहा देने और बाद में सम्पत्ति का बॅटवारा, शादी और भविश्य की योजनायें जैसी पारिवारिक बातों में लगे रहते है। मानवीय मूल्यों की इस टूटन का संकेत उपर्युक्त प्रसंग के माध्यम से स्पश्ट होता है।

बम्बई जैसे महानगर में नवीन जैसे युवक की मृत्यु का चित्रण दिल दहलाने वाला है। मनुश्य की जिंदगी पशु–पन्छियों से भी गयी बीती हो गई है। कब उस पर काल झपट पड़ेगा पता नहीं चलता। शकुन की खुशियों पर भी तो मौत इस तरह झपट पड़ी थी । इस प्रकार उपन्यासकार भाग्य का कायल बनता हुआ दार्शनिक भी बन जाता है। लेखक की तर्कशीलता यहॉ भी बनी रहती है।

आधुनिकता और उत्तरआधुनिकता के इस अंधेरे में मनुश्य की त्रासदी का रुप वही है। जो बीसवीं सदी के पूर्वार्ध्द में था अर्थात् भूमंडलीकरण ने तो आज अपना विकराल मायाजाल तो रचा है जो ऊपर से सुंदर और आकर्शित लगता है, किन्तु यह मायाजाल केवल कुछ ही प्रतिशत मनुश्यों को मनुश्य होने की यातना से मुक्त रखता है। शेश सभी पात्र सलमा, शकुन, मिसेस पुरी जैसे पात्र आज भी यातना और त्रासदी के नरक कुंड से मुक्त नहीं हो सके हैं। यह भूमंडलीकरण का असली रुप है।

संदर्भ

ऽ'जनगाथा'– देवेश ठाकुर, पृ.90, संस्करण 1992

ऽ'जनगाथा'– देवेश ठाकुर, पृ.161, संस्करण 1992

ऽ'जनगाथा'– देवेश ठाकुर, पृ.095, संस्करण 1992

ऽ'जनगाथा'– देवेश ठाकुर, पृ.212, संस्करण 1992

ऽ'जनगाथा'– देवेश ठाकुर, पृ.140, संस्करण 1992